दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

निर्णय तिथि: 12 फरवरी, 2024

जमानत आवेदन 3988/2023

सूरज प्रकाश .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री एम. के. परवेज़ और श्री के.एल.डी.एस. विनोबर, अधिवक्तागण

बनाम

राज्य ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: सुश्री शुभी गुप्ता, राज्य के लिए अति.लो.अभि के साथ उप.नि. जसप्रित पन्नू, थाना: रंजीत नगर।

कोरमः

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री ज्योति सिंह

निर्णय

न्या. ज्योति सिंह (मौखिक)

1. यह आवेदक सूरज प्रकाश पुत्र स्वर्गीय राम चंद्र प्रसाद की ओर से दं.प्र.सं की धारा 438 के तहत दायर एक आवेदन है, जिसमें थाना रंजीत नगर में भा.दं.सं.

की धारा 376/323 के तहत दर्ज प्राथमिकी संख्या 155/2023 दिनाँक 03.03.2023 में अग्रिम जमानत की मांग की गई है।

2. अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि दिनाँक 03.03.2023 को, 32 वर्षीय शिकायतकर्ता ने एक लिखित शिकायत की, जिसमें उसने याचिकाकर्ता के विरुद्ध विवाह का झूठा वादा करके यौन उत्पीडन का आरोप लगाया। शिकायतकर्ता का आरोप है कि वह नौकरी खोजने के लिए दिसंबर, 2020 में दिल्ली आई और पटेल नगर में रहने लगी। वह अध्ययन के लिए पास के पार्क और पुस्तकालय में जाने लगी थी और दिनाँक 09.05.2021, को शिकायतकर्ता की आवेदक से मुलाकात तब हुई जब वह वह ओल्ड राजेंद्र नगर के सिंधी पार्क में पढ़ रही थी और जल्द ही वे दोस्त बन गए और अपने मोबाइल नंबरों का आदान-प्रदान किया। अगस्त, 2021 में, आवेदक ने शिकायतकर्ता को प्रस्ताव दिया। उसी महीने, पी.जी आवास, में कुछ घटना के कारणवश जहाँ शिकायतकर्ता रह रही थी, वह असुरक्षित महसूस करने लगी और उसने आवेदक को घटना के बारे में बताया। कुछ समय बाद, आवेदक पांडव नगर में स्थानांतरित हो गया और शिकायतकर्ता को उसी आवास में स्थानांतरित करने की पेशकश की क्योंकि वे जल्द ही एक-दूसरे से शादी करने वाले थे। यह आरोप लगाया जाता है कि आवेदक ने उससे शादी करने के बहाने शिकायतकर्ता के साथ शारीरिक संबंध बनाए थे, लेकिन जब भी उसने उससे शादी करने के लिए कहा, तो उसने

अनुरोधों को टाला और नजरअंदाज कर दिया। दिनाँक 17.01.2023 पर, आवेदक ने शिकायतकर्ता पर अपना हाथ उठाया और जब उसने शोर मचाया, तो एक पड़ोसी मकान मालकिन ने हस्तक्षेप किया और मामले को सुलझा लिया। यह दिनाँक 27.02.2023 तक जारी रहा, जिस दिन शिकायतकर्ता तिलक नगर बाजार में खरीदारी करने गई थी, आवेदक आया और घर की चाबियाँ ले गया और जब वह शाम, 10 बजे, वापिस आई शिकायतकर्ता को घर में आवेदक नहीं मिला और उसका फोन भी बंद था। शिकायतकर्ता द्वारा शिकायत दर्ज कराए जाने पर आर.एम.एल. अस्पताल में उसकी चिकित्सा जांच कराई गई थी, जिसमें उसकी आंतरिक चिकित्सा जांच भी शामिल थी। दिनाँक 04.03.2023 पर, दं.प्र.सं. पर धारा 164 के तहत अभियोक्त्री का बयान दर्ज किया गया था, जिसमें उसने अपनी शिकायत में संस्करण की संपुष्टि की थी।

3. स्थिति रिपोर्ट न्यायालय में सौंपी जाती है और उसी को अभिलेख में लिया जाता है, जिसमें प्राथमिकी से उभरने वाले उपरोक्त तथ्यों को दोहराया गया है। आगे यह कहा गया है कि जाँच के दौरान आवेदक की पते पर तलाशी ली गई थी, लेकिन उसका पता नहीं चल सका। अजमानतीय वारंट ('एनबीडब्ल्यू') विद्वान ए.सी.एम.एम.,/अति.मु.महा.दं., पश्चिमी जिला, तीस हजारी न्यायालय, दिल्ली द्वारा दिनाँक 01.04.2023 पर जारी किए गए थे, लेकिन आवेदक जानबूझकर अपनी गिरफ्तारी से बच रहा था और एनबीडब्ल्यू को निष्पादित नहीं किया जा

सका। दिनाँक 01.05.2023 पर, आवेदक के खिलाफ दं.प्र.सं. की धारा 82 के तहत प्रक्रिया शुरू की गई थी, लेकिन उसने न तो आत्मसमर्पण किया और न ही उसे गिरफ्तार किया जा सका। इसके पश्चात, न्यायालय ने आवेदक को दिनाँक 06.11.2023 पर उद्घोषित अपराधी घोषित कर दिया।

4. दिनाँक 24.11.2023 पर, इस न्यायालय ने आवेदक को अंतरिम संरक्षण प्रदान करते हुए निर्देश दिया कि उसके खिलाफ कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाएगी, बशर्ते वह उप-निरीक्षक द्वारा निर्देशित जांच में शामिल हो और उसमें पूरा सहयोग करे। यह भी निर्देश दिया गया कि आवेदक 04 बजे शाम उप-निरीक्षक के समक्ष दिनाँक 28.11.2023 पर उपस्थित होगा और आगे की किसी भी तारीख को उप-निरीक्षक को उसकी आवश्यकता होती है और वह उक्त तारीख को उप-निरीक्षक को अपना पता और टेलीफोन नंबर प्रदान करेगा। आरोप पत्र दाखिल कर दिया गया है और विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष सुनवाई की अगली तारीख दिनाँक 22.03.2024 है।

5. आवेदक के लिए विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि आवेदक एक आई. ए.एस. आकांक्षी है और ओल्ड राजेंद्र नगर में रह रहा था और सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी कर रहा था। आवेदक निर्दोष है और अभियोक्त्री/शिकायतकर्ता उसे गलत तरीके से फंसाने का हर संभव प्रयास कर रही है। यह शिकायतकर्ता है जो कई मौकों पर आवेदक के किराए के आवास पर गई थी और दोनों के बीच

सहमति से शारीरिक संबंध थे। आपसी समझ और लिव-इन रिलेशनशिप को स्वीकार करने पर, दोनों अक्टूबर, 2022 में पांडव नगर में आवास में स्थानांतरित हो गए। फरवरी, 2023 की शुरुआत में, शिकायतकर्ता ने खुलासा किया कि उसने पहले सतना, एम.पी. में मोहित शर्मा के खिलाफ बलात्कार का आरोप लगाते हुए शिकायत दर्ज कराई थी और उससे शादी कर ली और शादी से एक लड़की का जन्म हुआ। हालाँकि, अपने पति द्वारा शारीरिक दुरुपयोग के कारण, वह उसे और बच्चे को छोड़कर दिल्ली आ गई। पति द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 11 के तहत याचिका दायर की गई थी और विवाह को अमान्य घोषित कर दिया गया है। अभियोक्त्री की उम्र 34 वर्ष है और वह अपने कार्यों के परिणामों को जानती है और वह उचित प्रकार से जानती है कि संबंध सहमति से था और बलात्कार नहीं था, जैसा कि अब उसके द्वारा कथित तौर पर आरोप लगाया जा रहा है।

6. यह भी आग्रह किया जाता है कि आवेदक जाँच में शामिल हुआ और जब भी उसे उप-निरीक्षक द्वारा बुलाया गया तो उसने उसमें सहयोग किया। आवेदक पहले उप-निरीक्षक के समक्ष दिनाँक 28.11.2023 पर और उसके पश्चात दिनाँक 01.12.2023 पर और अंत में दिनाँक 15.01.2024 पर उपस्थित हुआ और इसलिए, आवेदक को अग्रिम जमानत दी जाए ताकि अभियोक्त्री द्वारा झूठे आरोपों के कारण उसका भविष्य खतरे में न पड़े।

7. इसके विपरीत, विद्वान अति.लो.अभि. आवेदन का कड़ा विरोध करते हैं और कहते हैं कि आवेदक जाँच में शामिल नहीं हो रहा है और/या उसमें सहयोग नहीं कर रहा है। विचारण न्यायालय द्वारा जारी एनबीडब्ल्यू को निष्पादित नहीं किया जा सका क्योंकि वह अपनी गिरफ्तारी से बच रहा था और उसे दिनाँक 06.11.2023 पर उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है। यह एक सुविस्थापित कानून है कि न्यायालय किसी आवेदक को यदि अगर उसे उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है। तो दं.प्र.सं., की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत देने से बचें, विद्वान अति.लो.अभि. द्वारा इस बात के लिए उच्चतम न्यायालय के हाल ही के एक निर्णय ***हरियाणा राज्य बनाम धरमराज, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1085*** और उच्चतम न्यायालय के पूर्व के निर्णय ***लवेश बनाम राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली), (2012) 8 एस. सी. सी. 730*** और ***मध्य प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप शर्मा,*** (***2014) 2 एस. सी. सी*** 171 के एक भाग पर विश्वास रखा है।

8. इस निवेदन के प्रति पूर्वाग्रह के बिना, यह तर्क दिया जाता है कि अन्यथा भी, आवेदक अग्रिम जमानत का हकदार नहीं है क्योंकि वह जाँच में सहयोग नहीं कर रहा है। इस न्यायालय, ने जबकि अंतरिम सुरक्षा प्रदान करते हुए आवेदक को अपना पता और मोबाइल नंबर उप-निरीक्षक को देने का स्पष्ट निर्देश दिया था। अपना वर्तमान पता देने के लिए पूछे जाने पर, आवेदक ने पहले

झारखंड का अपना कथित पता, यानी तालगरिया मोरे, जामगोरिया, सामने बैंक ऑफ इंडिया, समिति बाजार के पास, थाना चास, बोकारो, झारखंड-827013 प्रस्तुत किया था। हालाँकि, जाँच के दौरान, जब उक्त पते पर दौरा किया गया, तो आवेदक उक्त पते पर कभी नहीं मिला। पुनः, दिनाँक 28.11.2023 पर, उन्हें वह पता देने के लिए कहा गया जिस पर वह रह रहा था और जवाब में, उन्होंने वही पता दिया गया। उसका मोबाइल फोन दिन के अधिकांश समय बंद रहता था और उससे संपर्क करना मुश्किल हो जाता था। उसके फोन के कॉल विवरण रिपोर्ट से पता चलता है कि उसने एक दिन के लिए, भी झारखंड का दौरा नहीं किया था।

9. जवाब में, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने जाँच में शामिल न होने और/या असहयोग के आरोपों का खंडन किया और निवेदन किया कि आवेदक वृंदावन में रह रहा है और उसके समर्थन में श्री श्री 1008 श्री खदेश्वरी जी महाराज मंदिर ट्रस्ट, परिक्रमा मार्ग, वृंदावन, उत्तर प्रदेश में किराए के भुगतान को स्वीकार करते हुए कुछ रसीदें सौंपता है। यह भी कहा गया है कि आवेदक ने वर्तमान आवेदन दाखिल करने के बाद भी उसे उद्घोषित अपराधी घोषित करने के आदेश को रद्द करने के लिए पहले ही कदम उठा लिए हैं।

10. वर्तमान आवेदन में इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए दो मुद्दे उत्पन्न होते हैं। विचार के लिए पहला बिंदु यह है कि क्या आवेदक दं.प्र.सं. की धारा

438 के संदर्भ में अग्रिम जमानत का हकदार है, इस निर्विवाद तथ्य के आलोक में कि उसे दिनाँक 06.11.2023 पर विचारण न्यायालय द्वारा उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है। इस बिंदु पर कानून अब अनिर्णीत विषय नहीं है। ***नवेश (पूर्वोक्त)*** में, उच्चतम न्यायालय ने कहा कि यह अजमानतीय अपराध में, यदि किसी व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है, तो वह उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में आवेदन करने के लिए स्वतंत्र है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में, उसे तब तक जमानत पर रिहा किया जाए जब तक कि विश्वास उचित आधार पर स्थापित है। दं.प्र.सं.की धारा 438 के प्रावधान की जाँच करते हुए, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अग्रिम जमानत के अनुरोध पर विचार करते समय, न्यायालय को अभियोग की प्रकृति और गंभीरता, पूर्ववृत्त, आवेदक के न्याय, से भागने की संभावना आदि पर विचार करना होगा। आम तौर पर, न्यायालयों को मामले की गंभीरता को नजर अंदाज करते हुए अग्रिम जमानत देने के विवेक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अपने समक्ष उस मामले पर विचार करते हुए, जिसमें अपीलकर्ता को फ़रार घोषित किया गया था, उच्चतम न्यायालय ने कहा कि सामग्री और जानकारी से यह स्पष्ट था कि अपीलकर्ता पूछताछ और जाँच के लिए उपलब्ध नहीं था और उसे फ़रार घोषित किया गया था और कहा कि जब अभियुक्त 'फरार'

है और ' उद्घोषित अपराधी', घोषित किया गया है, तो यहाँ अग्रिम जमानत स्वीकृत करने का कोई सवाल ही नहीं है। प्रासंगिक अनुच्छेद इस प्रकार हैः

> *"12. इन सामग्रियों और सूचनाओं, से यह स्पष्ट है कि वर्तमान अपीलकर्ता पूछताछ और जाँच के लिए उपलब्ध नहीं था और उसे "फरार" घोषित कर दिया गया था। आम तौर पर, जब अभियुक्त "फरार" हो और उसे " उद्घोषित अपराधी" घोषित किया गया हो, तो अग्रिम जमानत देने का कोई सवाल ही नहीं है। हम दोहराते हैं कि जब कोई व्यक्ति जिसके खिलाफ वारंट जारी किया गया था और वारंट के निष्पादन से बचने के लिए फरार है या खुद को छुपा रहा है और संहिता की धारा 82 के तहत उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है, तो वह अग्रिम जमानत से राहत का हकदार नहीं है।"*

11. दो साल बाद, ***लवेश (पूर्वोक्त)*** के फैसले का हवाला देते हुए, उच्चतम न्यायालय ने ***प्रदीप शर्मा (पूर्वोक्त)*** के मामले में, उच्च न्यायालय के उस आदेश को अपास्त कर दिया जिसमें प्रत्यर्थी की अग्रिम जमानत स्वीकृत की गई थी। उक्त मामले में, विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट /सीजेएम ने एक घोषणा जारी की थी जिसमें दं.प्र.सं. की धारा 82 के तहत प्रत्यर्थी की उपस्थिति की आवश्यकता थी, लेकिन उच्च न्यायालय ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अग्रिम जमानत स्वीकृत की । उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रत्यर्थी गंभीर अपराधों के लिए अभियोजन का सामना कर रहा था और

उसे उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया था और इस प्रकार उच्च न्यायालय कानून की इस स्थिर स्थिति का मूल्यांकन करने में विफल रहा कि जहाँ अभियुक्त को फ़रार घोषित किया गया है और उसने जाँच में सहयोग नहीं किया है, उसे अग्रिम जमानत की स्वीकृति नहीं दी जानी चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि दं.प्र.सं. की धारा 438 यह स्पष्ट करती है कि उक्त प्रावधान के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्ति कुछ हद तक प्रकृति में असाधारण है और इसका उपयोग केवल उन अपवादी मामलों में किया जाना चाहिए जहाँ यह प्रतीत होता है कि व्यक्ति को गलत तरीके से फंसाया जा सकता है या जहाँ यह अभिनिर्धारित करने के लिए उचित आधार हैं कि अभियुक्त व्यक्ति के स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने की संभावना नहीं है।

12. कानून की इस स्थिति को उच्चतम न्यायालय द्वारा ***प्रेम शंकर प्रसाद बनाम बिहार राज्य और अन्य, (2022) 14 एस.सी.सी. 516*** में दोहराया और पुनः पुष्टि की गई है। उक्त मामले में, शिकायतकर्ता ने भा.दं.सं. की धारा 406/407/468 506 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अभियुक्त को अग्रिम जमानत देने वाले उच्च न्यायालय के आदेश का विरोध किया था। विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दिनाँक 19.12.2018 पर गिरफ्तारी का वारंट जारी किया गया था। इसके बाद आरोपी फरार था और गिरफ्तारी के वारंट की प्रक्रिया से बचने के लिए खुद को छिपा रहा था और विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने दं.प्र.सं., की धारा 82

के तहत एक घोषणा जारी की, जिसके बाद अभियुक्त ने विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष विस्तृत आदेश द्वारा, एक याचिका दायर की। विचारण न्यायालय ने जमानत याचिका को गुणागुण और साथ ही इस आधार पर खारिज कर दिया कि अभियुक्त फरार था और दं.प्र.सं. की धारा 82/83 के तहत कार्यवाही शुरू की गई थी। उच्च न्यायालय ने घोषणा की प्रक्रिया जारी नही होने के बाद अग्रिम जमानत की स्वीकृति दे दी गई थी। अभियुक्त के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त कर दिया और निर्णय के प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं:

> *"10.3. एम.पी. राज्य बनाम प्रदीप शर्मा [एम.पी.राज्य बनाम प्रदीप शर्मा, (2014) 2 एस. सी. सी. 171 : (2014) 1 एस.सी. सी. (सी.आर.आई.)768], इस न्यायालय द्वारा यह देखा और अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि किसी को दं.प्र.सं. की धारा 82 के संदर्भ में फरार / घोषित अपराधी घोषित किया जाता है, तो वह अग्रिम जमानत से राहत का हकदार नहीं है। पैराग्राफ 14 से 16 में, इसे निम्नानुसार माना और अभिनिर्धारित किया जाता है:(एस.सी.सी. पीपी. 175-76)*
>
> > *"14. उपरोक्त प्रश्न का उत्तर देने के लिए, संहिता की धारा 438 का संदर्भ देना वांछनीय है जो इस प्रकार है:*
> >
> > ***'438. गिरफ्तारी की आशंका वाले व्यक्ति को जमानत स्वीकृत करने का निर्देश।—***

(1) जहाँ किसी व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे अजमानतीय अपराध करने के आरोप में गिरफ्तार किया जा सकता है, वह इस धारा के तहत निर्देश के लिए उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसे जमानत पर रिहा किया जाएगा; और वह न्यायालय, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित कारकों को धयान में रखने के बाद, अर्थात् -

(i) अभियोग की प्रकृति और गंभीरता;

(ii) आवेदक का पूर्ववृत्त, जिसमें यह तथ्य भी शामिल है कि क्या वह किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में किसी न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए जाने पर पहले कारावास से गुजरा है।

(iii) न्याय से भागने की आवेदक की संभाव्यता; और

(iv) जहां अभियोग आवेदक को इस प्रकार गिरफ्तार कराकर उसे क्षति पहुचाने या उसका अपमान करने के उद्देश्य से लगाया गया है,

वहाँ या तो तत्काल आवेदन अस्वीकार करेगा या अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए अंतिम आदेश देगा।

बशर्ते कि, जहाँ उच्च न्यायालय या, जैसा भी मामला हो, सत्र न्यायालय ने इस उप-धारा के अधीन कोई अंतरिम आदेश पारित नहीं किया है या अग्रिम जमानत देने के लिए

आवेदन को अस्वीकार कर दिया है, वहाँ किसी पुलिस थाने का भारसाधक अधिकारी इस बात के लिए स्वतंत्र होगा कि ऐसे आवेदन में अभियोग की आशंका के आधार पर आवेदक को वारंट के बिना गिरफ्तार कर ले।'

उपरोक्त प्रावधान यह स्पष्ट करता है कि संहिता की धारा 438 के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्ति कुछ हद तक असाधारण है और इसका प्रयोग केवल उन अपवादिक मामलों में किया जाना चाहिए जहाँ यह प्रतीत होता है कि व्यक्ति को गलत तरीके से फंसाया जा सकता है या जहाँ यह अभिनिर्धारित करने के लिए उचित आधार हैं कि किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के अन्यथा अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने की संभावना नहीं है।

15. अद्री धरण दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [आद्री धरण दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2005) 4 एस.सी.सी. 303: 2005 एस.सी.सी. (सी.आर.आई.) 933] में इस न्यायालय ने संहिता की धारा 438 के दायरे पर निम्नानुसार विचार कियाः (एस.सी.सी. पीपी. 311-12, पैरा 16)

> *'16. धारा 438 एक प्रक्रियात्मक प्रावधान है जो एक ऐसे व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधित है जो निर्दोष होने का अनुरोध करने का हकदार है, क्योंकि वह उस अपराध के लिए दोषी ठहराए गए संहिता की धारा 438 के तहत शक्ति के प्रयोग के लिए आवेदन करने की तारीख पर नहीं है जिसके संबंध में वह*

जमानत चाहता है। आवेदक को यह दिखाना होगा कि उसके पास "विश्वास करने का कारण" है कि उसे अजमानति अपराध में गिरफ्तार किया जा सकता है।"विश्वास करने का कारण" अभिव्यक्ति के उपयोग से पता चलता है कि यह विश्वास कि आवेदक को गिरफ्तार किया जा सकता है, उचित आधारों पर आधारित होना चाहिए। केवल "भय" "विश्वास" नहीं है जिसके कारण आवेदक के लिए यह दिखाना पर्याप्त नहीं है कि उसे किसी प्रकार की अस्पष्ट आशंका है कि कोई उसके खिलाफ अभियोग लगाने जा रहा है जिसके अनुसरण में उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। जिन आधारों पर आवेदक का विश्वास है कि उसे अजमानति अपराध में गिरफ्तार किया जा सकता है, वह अवश्य जाँच योग्य होने चाहिए। यदि उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में कोई आवेदन किया जाता है, तो यह तय करना संबंधित न्यायालय का काम है कि मांगी गई राहत देने के लिए कोई मामला बनाया गया है। अभियुक्त की गिरफ्तारी के बाद प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सकता है। आम तौर पर एक बहुव्यापी आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए। यह उस अनुभाग की भाषा से ही प्रवाहित होता है जिसके लिए आवेदक को यह दिखाने की आवश्यकता होती है कि उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। किसी विश्वास को उचित

आधारों पर तभी स्थापित कहा जा सकता है जब ऐसा कुछ ठोस हो जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि आवेदक की आशंका कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है, वह वास्तविक है। आम तौर पर इस आशय का निर्देश जारी नहीं किया जाना चाहिए कि आवेदक को "जब भी किसी भी अपराध के लिए गिरफ्तार किया जाता है" तो उसे जमानत पर रिहा कर दिया जाएगा। इस तरह के "बहुव्यापी आदेश" को पारित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि यह किसी भी और हर प्रकार की कथित रूप से गैरकानूनी गतिविधि को छुपाने या उसकी रक्षा करने के लिए एक व्यापक आदेश के रूप में काम करेगा। धारा 438 के तहत एक आदेश व्यक्ति की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने का एक उपकरण है, यह न तो अपराध करने के लिए आज्ञापत्र है और न ही किसी भी संभावित और असंभावित सभी प्रकार के अभियोग के खिलाफ ढाल है। ऊपर दी गई कानूनी स्थिति की पृष्ठभूमि में विचार किए गए मामले के तथ्यों पर, यह प्रथमदृष्टया ऐसा मामला प्रतीत नहीं होता है जहाँ संहिता की धारा 438 के संदर्भ में कोई आदेश पारित किया जा सकता है।'

16. हाल ही में, लवेश बनाम राज्य (रा.रा.क्षे. दिल्ली) [लवेश बनाम राज्य (रा.रा.क्षे. दिल्ली),(2012) 8 एस.सी.सी. 730 : (2012) 3 एस.सी.सी. (सी.आर.आई.) 1040], में इस न्यायालय (जिसमें हम दोनों पक्षकार थे) ने

संहिता की धारा 82 के संदर्भ में भगोड़े या उद्घोषित अपराधी घोषित किए गए व्यक्ति को धारा 438 के तहत राहत देने की गुंजाइश पर विचार किया। पैरा 12 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार कहा: (एस.सी.सी. पी.733)

'12. इन सामग्रियों और सूचनाओं से यह स्पष्ट है कि वर्तमान अपीलार्थी पूछताछ और जाँच के लिए उपलब्ध नहीं था और उसे "फरार" घोषित कर दिया गया था। आम तौर पर, जब आरोपी "फरार" हो और उसे " उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया हो, तो यहाँ अग्रिम जमानत देने का कोई सवाल ही नहीं होता है। हम दोहराते हैं कि जब कोई व्यक्ति जिसके खिलाफ वारंट जारी किया गया था और वारंट के निष्पादन से बचने के लिए फरार है या खुद को छुपा रहा है और संहिता की धारा 82 के तहत घोषित अपराधी घोषित किया गया है, तो वह अग्रिम जमानत से राहत का हकदार नहीं है।'

उपरोक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि यदि किसी को संहिता की धारा 82 के अनुसार फरार/ उद्घोषित अपराधी घोषित किया जाता है, तो वह अग्रिम जमानत की राहत का हकदार नहीं है।"

11. इस प्रकार उच्च न्यायालय ने दं.प्र.स. की धाराओं 82/83 के तहत कार्यवाही की अनदेखी करते हुए प्रत्यर्थी 2-अभियुक्त को अग्रिम जमानत देने में त्रुटि की है।

12. यहाँ तक कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी 2-अभियुक्त को अग्रिम जमानत देते समय की गई टिप्पणियाँ कि अभियोग की प्रकृति एक व्यावसायिक लेनदेन से उत्पन्न हो रही है और

इसलिए अभियुक्त अग्रिम जमानत का हकदार है, यहाँ तक की इसे उसी प्रकार स्वीकारा नहीं जा सकता है। यहाँ तक की व्यावसायिक लेन-देन के मामले में भी भा.दं.सं. के तहत अपराध अपराध हो सकता है, विशेष रूप से धारा 406,420,467,468, के तहत आदि। विचार करने के लिए क्या आवश्यक है क्या वह आरोप और अभियोग की प्रकृति है, न की यह की अभियोग की प्रकृति किसी व्यवसायिक लेनदेन से उत्पन्न हो रही है। इस स्तर पर, यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि प्रत्यर्थी 2-अभियुक्त को धारा 406 और 420, आदि के तहत दंडनीय अपराधों के लिए आरोप-पत्र दायर किया गया है और विद्वान मजिस्ट्रेट न्यायालय की न्यायालय में आरोप-पत्र दायर किया गया है।"

13. उच्चतम न्यायालय का हाल ही में ***धर्मराज (पूर्वोक्त)*** में दिया गया एक निर्णय इस विषय पर बेहद शिक्षाप्रद और ज्ञानवर्धक है। इस मामले में, राज्य ने गंभीर अपराधों के अभियुक्त प्रत्यर्थी को, मंजूर की गई अग्रिम जमानत को रद्द करने के लिए एक अपील दायर की थी। प्रत्यर्थी को एक उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया था और राज्य का प्रतिविरोध था कि उच्च न्यायालय द्वारा एक उद्घोषित अपराधी अपराधी को दं.प्र.सं. की धारा 438 के तहत अनुग्रह मंजूर करना गलत था। ***गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य, (1980) 2 एस.सी.सी. 565; सुशीला अग्रवाल बनाम राज्य (रा.रा.क्षे.दिल्ली), (2020) 5 एस. सी. सी. 1 और सिद्धराम सतलिंगप्पा म्हेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2011) 1***

एस.सी.सी. 694, में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का उल्लेख करते हुए अग्रिम जमानत की रूपरेखा के संबंध में, उच्चतम न्यायालय ने पहले कहा कि न्यायालय इस बात से अवगत था कि स्वतंत्रता में अधिक आसानी से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जब उच्च न्यायालय द्वारा पूर्व-गिरफ्तारी जमानत आदेश को मंजूरी दी जाती है। उच्चतम न्यायालय ने आगे कहा कि जमानत की तरह, अग्रिम जमानत देने का भी न्यायिक विवेक के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए। कोई भी कारण नही है जो उच्च न्यायालय को जमानत देने के लिए समर्थन करे उनमें से दो प्रत्यर्थी की उद्घोषित अपराधी के रूप में घोषणा जानबूझकर न्यायालय से बचने के कारण नहीं थी और वह पहली बार अपराधी था और 'बदलाव और रास्ते को सही करने' के अवसर का हकदार था, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय का तर्क उच्चतम न्यायालय के समक्ष खुद की सराहना नहीं करता था क्योंकि उच्च न्यायालय ने जिस बात पर ध्यान नहीं दिया था वह यह थी कि अभियुक्त एक उद्घोषित अपराधी था। निर्णय के प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं:

> *"11 अग्रिम जमानत की रूपरेखा को गुरबख्श सिंह सिबिया बनाम पंजाब राज्य, (1980) 2 एस.सी.सी. 565 और सुशीला अग्रवाल बनाम राज्य (रा.रा.क्षे. दिल्ली), (2020) 5 एस.सी.सी. 1. सिद्धराम सतलिंगप्पा मेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2011) 1 एस.सी.सी. 694 में 5-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा विस्तृत रूप से*

निपटाया गया है। इस संदर्भ में उल्लेख के योग्य है, यद्यपि सुशीला अग्रवाल (पूर्वोक्त) में इसके आंशिक अधिमूल्यांकन के बावजूद। हम जानते हैं कि स्वतंत्रता आसानी से हस्तक्षेप नहीं की जानी चाहिए। इससे भी अधिक, जब उच्च न्यायालय द्वारा पूर्व-गिरफ्तारी जमानत का आदेश को पहले ही मंजूरी दी जा चुकी हो।

12. फिर भी, जमानत की तरह, अग्रिम जमानत की मंजूरी का उपयोग न्यायिक विवेक के साथ किया जाता है। इस न्यायालय द्वारा अपने निर्णयों द्वारा दर्शाए गए कारक व्याख्यात्मक हैं, विस्तृत नहीं हैं। निस्संदेह, प्रत्येक मामले का निर्णय अपने तथ्यों और गुणगुण के अनुसार बदल जाता है। विपन कुमार धीर बनाम पंजाब राज्य, (2021) 15 एस.सी.सी. 518 मामले में, न्यायालय ने दोलत राम (पूर्वोक्त) और एक्स बनाम तेलंगाना राज्य (पूर्वोक्त) पर ध्यान देंते हुए अभियुक्त को मंजूर की गई अग्रिम जमानत को रद्द कर दिया। उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, हम अपना ध्यान वर्तमान तथ्यों की ओर केंद्रित करते हैं।

13. मामले पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने पाया कि वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय के लिए प्रत्यर्थी को अग्रिम जमानत की मंजूरी देना उचित नहीं था।

14. जैसा कि आक्षेपित आदेश से स्पष्ट होगा, उसके तर्क का कारण पैराग्राफ 7-12 में निहित है। निकट अवलोकन से पता चलता है कि उच्च न्यायालय के साथ कितना समर्थन थाः

(क) कि प्राथमिकी में अपराधों के लिए अधिकतम सजा 7 वर्ष से अधिक नहीं थी।

(ख) कि प्रत्यर्थी द्वारा जाँच को प्रभावित करने, साक्ष्य आदि के साथ छेड़छाड़ करने की संभावना पर कड़ी शर्तें लगाकर ध्यान दिया जा सकता है।

(ग) कि प्रत्यर्थी की उद्घोषित अपराधी के रूप में घोषणा उसके जानबूझकर न्यायालय से बचने के कारण नहीं थी।

(घ) कि प्रत्यर्थी पहली-बार अपराधी था और 'बदलाव और रास्ते' के अवसर का हकदार था।

15. उच्च न्यायालय का तर्क स्वयं में हमारी सराहना नहीं करता है। उच्च न्यायालय ने अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य, (2014) 8 एस.सी.सी. 273 के मामले में विश्वास रखा है प्रभाव से कि जहाँ अपराध सात साल से कम या सात साल तक की अवधि के कारावास से दंडनीय है, चाहे वह जुर्माने के साथ हो या बिना जुर्माने के, वहाँ कोई स्वतः गिरफ्तारी नहीं होगी। उक्त निर्णय को देखने के साथ-साथ एम.डी. असफाक आलम बनाम झारखंड राज्य, 2023 आई.एन.एस.सी. 6605, में इसकी हालिया सबसे जादा पुनरावृत्ति हुई है।, हम उसमें प्रतिपादित प्रस्तावों द्वारा पूरी तरह सहमत हैं। हालाँकि, भा.दं.सं. की धारा 364 में आजीवन कारावास या दस साल के कठोर कारावास और जुर्माने की अवधि होती है। हम इस बात को लेकर थोड़ा उलझन में हैं कि भा.दं.सं. की धारा 364 को जोड़ने के बावजूद, उच्च न्यायालय ने यह विचार कैसे लिया कि अर्नेश कुमार (पूर्वोक्त) प्रत्यर्थी की उसकी

पूर्व जमानत के प्रयास की कोशिश में प्रत्यर्थी की सहायता करेगा।

16. उच्च न्यायालय (भी) जो ध्यान नहीं दे पाया वह यह थी कि प्रत्यर्थी एक उद्घोषित अपराधी था। उच्च न्यायालय पैराग्राफ 28 में नोट करता है कि वह उद्घोषणा कार्यवाही को अभिखंडित करने की मांग करने वाली प्रार्थना पर विचार नहीं कर रहा था क्योंकि उन्हें उसके समक्ष याचिका का हिस्सा नहीं बनाया गया था। जैसा कि चीजें थीं, प्रत्यर्थी को दिनाँक 05.02.2021 पर एक घोषित अपराधी घोषित किया गया था, और केवल अक्टूबर, 2021 में उच्च न्यायालय से अग्रिम जमानत मांगी गई थी। इस प्रकार, उच्च न्यायालय के लिए यह सही नहीं था कि वह केवल कथनों के आधार पर इस तरह के तथ्य की उपेक्षा करे, जो उसके समक्ष याचिका में, जैसा कि आक्षेपित आदेश के पैराग्राफ 9 और 10 में दर्ज किया गया है, एक समान-ध्वनि वाले नाम के लिए केवल विज्ञापन द्वारा ऐसी घोषणा की पृष्ठभूमि को समझाने का उद्देश्य रखता है। प्रत्यर्थी की घोषित अपराधी के रूप में घोषणा, और आक्षेपित आदेश की तारीख पर मौजूद ऐसी घोषणा, हम उच्च न्यायालय से सहमत होने में असमर्थ हैं कि प्रत्यर्थी 'बदलाव और रास्ते को सही' करने का हकदार था।'

17. प्रत्यर्थी, पहले उसे उदघोषित अपराधी घोषित करने वाले आदेश का सफलतापूर्वक विरोध किए बिना, अग्रिम जमानत लेने के लिए आगे नहीं बढ़ सकता था। तथ्यात्मक प्रिज्म, को देखते हुए, हम स्पष्ट हैं कि दं.प्र.सं. की धारा 438 के तहत प्रत्यर्थी के आवेदन पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था, क्योंकि वह एक

उद्घोषित अपराधी था। हैं यह हम ध्यान दे सकते हैं लवेश बनाम राज्य (रा.रा.क्षे. दिल्ली), (2012) 8 एस.सी.सी. 730 में, की यह न्यायालय एक घोषित अपराधी को अग्रिम जमानत देने के लिए स्पष्ट खिलाफ था। इसी तरह, मध्य प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप शर्मा, (2014) 2 एस. सी. सी.171 के निर्णय में निर्णय लवेश (उपरोक्त) का अनुसरण करता है, जिसमें इस न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि एक उद्घोषित अपराधी अग्रिम जमानत का हकदार नहीं होगा। बेशक, एक अपवाद और दुर्लभ मामले में, यह न्यायालय या उच्च न्यायालय अग्रिम जमानत की माँग करने वाली याचिका पर विचार कर सकते हैं, भले ही आवेदक एक उद्घोषित अपराधी हो, यह देखते हुए कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय संवैधानिक न्यायालय हैं। हालाँकि, इस मामले में कोई अपवादिक स्थिति उत्पन्न नहीं होती है। प्रदीप शर्मा (पूर्वोक्त) के बाद, प्रेम शंकर प्रसाद बनाम बिहार राज्य, 2021 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 955 में, यह न्यायालय स्पष्ट था कि उसमें उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 82 और 83 के तहत कार्यवाही की अनदेखी करते हुए अग्रिम जमानत देने में गलती की। अभिषेक बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2022) 8 एस.सी.सी. 282 में, इस न्यायालय ने निष्कर्ष निकालाः

> *'68. जहाँ तक अपीलकर्ता के खिलाफ घोषणा जारी किए जाने के निहितार्थ का संबंध है, हमें यह स्पष्ट करने में कोई संकोच नहीं है कि कोई भी व्यक्ति, जिसे "फरार" घोषित किया गया है और जो जाँच अभिकरण की पहुंच से बाहर*

रहता है और इस तरह कानून के साथ सीधे टकराव में रहता है, आमतौर, पर कोई रियायत या अनुग्रह का हकदार नहीं है। संदर्भ के माध्यम से, हम यह देख सकते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के संदर्भ में गिरफ्तारी-पूर्व जमानत के अनुग्रह के संबंध में, इस न्यायालय ने बार-बार कहा है कि जब कोई अभियुक्त फरार है और उसे उद्घोषित अपराधी घोषित कर दिया जाता है, तो उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 का लाभ देने का कोई सवाल ही नहीं है। [उदाहरण के लिए, प्रेम शंकर प्रसाद बनाम बिहार राज्य, (2022) 14 एस.सी.सी. 529,2021 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 955]...'''

14. उपरोक्त निर्णयों के संदर्भ में, यह स्पष्ट है कि ऐसे मामले में जहां अभियुक्त को घोषित अपराधी घोषित किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत आवेदन पर विचार नहीं किया जाना चाहिए, सिवाय असाधारण और दुर्लभ मामलों के और इस महत्वपूर्ण तथ्य को अभियुक्त द्वारा कानूनी प्रक्रिया से बचने के लिए दिए गए स्पष्टीकरण या औचित्य में जाकर दरकिनार नहीं किया जा सकता है। इस पृष्ठभूमि में, यह न्यायालय विद्वान अति.लो.अभि. से सहमत है कि वर्तमान आवेदन पर विचार नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि आवेदक को विचारण न्यायालय द्वारा दिनाँक 06.11.2023 पर घोषित अपराधी घोषित किया गया है और वर्तमान आवेदन उसके बाद दायर किया गया है। हालांकि सूक्ष्मता से,

आवेदक की ओर से एक तर्क दिया गया था कि इस आवेदन को दाखिल करने के बाद और सुनवाई की तारीख अंतिम तिथि के बाद, आवेदक द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया है जिसमें उसे घोषित अपराधी घोषित करने के आदेश को रद्द करने की मांग की गई है। इस तर्क को पहली बार में ही चुनौती दी जा सकती है, लेकिन ***धरमराज*** (पूर्वोक्त)में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणी के आलोक में इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है। कि 'उसे उद्घोषित अपराधी घोषित करने के आदेश पर पहली बार सफल विरोध किए बिना,' आवेदक अग्रिम जमानत लेने के लिए आगे नहीं बढ़ सकता है। इसलिए, पहले प्रश्न का उत्तर आवेदक के खिलाफ और राज्य के पक्ष में दिया जाता है।

15. एकमात्र अन्य बिंदु जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है, वह है राज्य का अभियोग कि आवेदक जाँच में सहयोग नहीं कर रहा है। उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, हालांकि इस आवेदन पर विचार नहीं किया जा सकता है क्योंकि आवेदक को एक उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है, फिर भी दूसरे आधार पर जाने पर भी, तर्क के लिए, आवेदक के पास कोई मामला नहीं है। यह स्थिति रिपोर्ट और उप.निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत केस डायरी से सामने आया है, सुनवाई के दौरान कि आवेदक ने झारखंड में एक स्थान का पता प्रस्तुत किया है, लेकिन जाँच अधिकारी के दौरे पर, वह उक्त पते पर कभी नहीं मिला और कॉल विवरण रिपोर्ट से पता चलता है कि उसका स्थान कभी भी उक्त

पते के करीब नहीं था। बार-बार आग्रह करने पर, आवेदक ने वृंदावन में किसी न्यास द्वारा जारी प्राप्तियों को छोड़कर नया/वर्तमान पता देने से इनकार कर दिया, जो अस्थायी रूप से रहने के लिए कुछ धन जमा करने का संकेत देते हैं। आवेदक का मोबाइल फोन ज्यादातर बंद कर दिया गया है और अति.लो.अभि. के अनुसार, निर्देशों पर, उक्त नंबर पर उससे संपर्क करना मुश्किल था। आज भी न्यायालय में, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता वर्तमान पता जिस पर आवेदक रह रहा है प्रदान करने में असमर्थ रहें है, और पूछताछ कर रहें है, इस मुद्दे पर पूरी तरह से टालमटोल किया गया है।

16. आवेदक के खिलाफ आरोप गंभीर हैं। उन्हें एक उद्घोषित अपराधी घोषित किया गया है और उसने जाँच के दौरान सहयोग नहीं किया है, जो इस न्यायालय द्वारा स्वीकृत किए गए अंतरिम आदेश की पूर्व शर्त थी। इसलिए, उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, यह न्यायालय आवेदक को अग्रिम जमानत देने के लिए इच्छुक नहीं है।

17. तदनुसार आवेदन खारिज कर दिया जाता है।

18. यह स्पष्ट किया जाता है कि इस आदेश में की गई कोई भी टिप्पणी मामले के गुणागुण पर अभिव्यक्ति के समान नहीं होगी।

न्या. ज्योति सिंह

फरवरी 12, 2024/केकेएस

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*